चँदोवा

रेलगाड़ी की लम्बी यात्रा थी। जीवन सिंह खिड़की के पट का सम्बल लिए ऊँघ रहा था। उसकी पत्नी सामने की सीट पर बैठी मुन्ने को अपना दूध पिला रही थी। दोनों लड़कियां उस से सटकर पड़ी सो रही थीं—अपने शरीर को शीत के भय से बुरी तरह समेटे।

उसकी पत्नी ने उसकी जेब की ओर हाथ बढ़ाते हुए कहा "तनिक बटुआ इधर देना" और कहते-कहते इन्द्रकौर ने उसकी जेब से बटुआ खींच लिया। इन्द्रकौर के स्वर और स्पर्श से जीवन सिंह चौंक उठा। शायद इस समय वह झपकी के मादक उड़नखटोले पर चढ़ कर रेलगाड़ी से भी पहले गुरू की नगरी अमृतसर में जा जहुँचा था। इस पवित्र तीर्थ के दर्शनों के लिए कई वर्षों से यह दम्पत्ति तरस रहे थे।

जीवन सिंह रेलवे इंजन का फायरमैन है। रेलवे कर्मचारी होने के नाते उसे आने-जाने का मुफ्त पास तो मिल सकता था, फिर भी अमृतसर जाने की आकाँक्षा शीघ्र सफ़ल न हो सकी। एक कठिनाई थी—दरबार साहब में चँदोवा चढ़ाने की उसकी

मनौती, जिस पर कम-से-कम सवा सौ रुपये व्यय होता था, जिसका प्रबन्ध करना उसके लिए बहुत कठिन था।

उसके घर पहली बार एक कन्या ने जन्म लिया। दूसरी बार उसे पुत्र की आशा थी। किन्तु फिर कन्या ने ही दर्शन दिए। और फिर दोनों लड़कियां भी महीने में बत्तीस दिन रुग्ण रहतीं। तिस पर किसी साधु महाराज ने डाल दिया एक भयानक भ्रम में। उसकी 'भविष्यवाणी' थी कि अभी और तीन कन्याओं का आगमन निश्चित है। लड़कियों के इस तूफ़ानी हल्ले से अपनी रक्षा करने के लिए ही पति-पत्नी ने वह मनौती मानी थी—गुरु बाबा उन्हें पुत्र का मुँह दिखाए तो वे उसके दरबार में सुच्चा चँदोवा चढ़ाएंगे। और गुरु बाबा ने समीप होकर उनकी सुनी! अगले वर्ष इन्द्रकौर की गोद पुत्र से अलंकृत हो गई।

मासिक वेतन तो जीवन सिंह का वही अस्सी रुपए था। घर का नून-तेल ज्यों-त्यों करके चल जाता था। किसी मास में यदि पांच-सात बच भी जाते तो दूसरे मास अकस्मात् कोई ऐसी आवश्यकता आ पड़ती कि उल्टे पांच-दस का उधार सिर पर उठाना पड़ता था। किन्तु मनौती तो हर हालत में देनी है, इसे टालने की सामर्थ्य किसमें? जब पिछले मास लड़के पर सीतला मैय्या की करोपी हुई तो दोनों के पाँव तले से धरती खिसक गई! इसे गुरू बाबा की करोपी समझ कर दोनों ने विह्वल होकर आर्त्तस्वर से बन्दना की "हे सच्चे पातशाह! जो कृपा करके दिया है तो इसकी जीवन-डोरी को लम्बी रखना। हम इसके अच्छा हो जाने के चालीस दिन के भीतर तेरे

दरबार में चँदोवा चढ़ावेंगे।" और फिर गुरू बाबा की शक्ति का साक्षातकार भी उन्हें हो गया जब उनका बच्चा दो-चार दिन में ही निरोग हो गया। आनन्द और श्रद्धा के साथ पति-पत्नी की आतमाएं प्रफुल्लित हो गईं। किन्तु एक प्रश्न का चिन्ह फिर भी अंकित था—"चँदोवा चढ़ाने के लिए रुपए?"

केवल रुपए का ही प्रश्न नहीं था। छुट्टी की भी समस्या थी। कभी बच्चों की बीमारी, कभी निरन्तर रात की डयूटी के कारण उनींदेपन की प्रतिक्रिया स्वरूप उसकी अपनी अस्वस्थता, या किसी सगे सम्बन्धी की मृत्यु तथा उसके क्रिया-कर्म आदि कारणों से उसकी सारी की सारी प्राप्य छुट्टी समाप्त हो चुकी थीं।

बड़ी हड़बड़ी मची छुट्टी के लिए। उसने दौड़-धूप की हद करदी। शँटर से लेकर फोरमैन तक के तलवे चाटे, किन्तु केवल पांच दिन की छुटी प्राप्त करने में बड़ी कठिनता से सफ़ल हो सका।

रुपए का प्रश्न अभी शेष था। रेलगाड़ी का पास तो निस्सन्देह मुफ़्त मिल गया, किन्तु ऊपर का खर्च और चँदोवा बनाने की रक्म, कुल मिलाकर डेढ़ सौ रुपए की लागत का अनुमान था। यदि चँदोवा बनाने के लिए कपड़े के खर्च में कंजूसी कर ली जाए, और ऊपर के खर्च को बचाने के लिए मामा जी के घर टिकने का उपक्रम किया जाय तो भी एक सौ रुपए का प्रबन्ध तो करना ही होगा। और इस रक्म का प्रबन्ध करने में जीवन सिंह ने कोई भी साधन अछूता नहीं छोड़ा।

उसके सहकारी भी कदाचित् उसीकी भांति अकिंचन थे फिर भी अपती-अपनी सामर्थ्य के अनुसार सबने उसकी सहायता की—और कुल पचास रुपए वह एकत्रित कर सका। अमृतसर की यात्रा को स्थगित नहीं किया जा सकता था। आज मुन्ने को ठीक हुए महीने भर से अधिक समय बीत चुका था, और यदि चालीसवाँ दिन भी बीत जाता तो न जाने गुरू बाबा के द्वार से विमुख होकर उसे कौन-कौन सी आपदाओं का मुंह देखना पड़ता।

आखिर जब शेष रुपए के प्रबन्ध के लिए और कोई मार्ग न सूझा तो उसने सोचा—अमृतसर वाले मामा जी किस मर्ज़ की दवा हैं? क्या एक लखपति सम्बन्धी उनकी इतनी सहायता भी न करेगा?

इसी आशा पर वह अपने युगल बच्चों समेत अमृतसर की यात्रा पर चल निकला था?

आंखें खुलीं, तो जीवन सिंह ने देखा इन्द्रकौर बटुए से नोट निकालकर गिन रही थी। "क्या बार-बार बटुए को छानने लगती हो?" जीवन सिंह ने एक मीठे उलाहने के साथ कहा—"क्या बार-बार गिनने से यह बढ़ जाएंगे?" "बढ़ तो नहीं जाएंगे" इन्द्रकौर ने विवशता से संकुचित भाव के साथ कहा—"पर मुझे तो यही धड़का लगा है कि यदि मामा जी से न मिले तो क्या होगा?"

"सच कहा है किसी ने" जीवन सिंह ने गर्वित होकर कहा "स्त्रियों की खोपड़ी में अक्ल नहीं होती। सौ बार समझाया

कि चिन्ता न कर, मामा जी के लिए हम पराए नहीं हैं। फिर उनके यहां बीस पचास का लेखा ही क्या। गुरु की कृपा से अन्दर-बाहर भरा हुआ है। देखना तो एक बार। मामी जी का स्वभाव भी इतना बुरा नहीं है। तनिक सूम है, पर हमसे सूमपना कैसा। पहली बार मुन्ना उनके घर जाएगा। अधिक नहीं दस-पांच तो इसकी हथेली पर रखेंगी ही। और फिर क्या तुम्हारा भी कपड़े-वस्त्र देकर मान न रखेंगे? लड़कियों ने भी क्या रोज़-रोज़ उनके घर जाना है? वैसे भी जब मामा जी को मनौती की बात का पता चलेगा तो चँदोवा की पूरी नहीं तो आधी रकम तो स्वयं ही दे देंगे।

पति की बात सुनकर इन्द्रकौर का मन्द उत्साह पुनः स्थिर हो गया।

"हां ऐसा करना" जैसे अध्यापक अपने विद्यार्थी को परीक्षा प्रवेश करने से पहले समझाता है वैसे जीवन सिंह ने उसे समझाना आरम्भ किया—"बातचीत में तनिक सलीके से काम लेना। बड़े आदमी हैं, यह न सोचें कि गंवारों से वास्ता पड़ा है।"

"लो" इन्द्रकौर अपनी योग्यता के गर्व से बोली, "मुन्नी के बापू! तुमने सचमुच मुझे इतनी गई बीती समझ रखा है? जन्म गांव में हुआ, पर आंखें तो शहर में खुली हैं। मामी एक बार गदगद न हो उठे तो कहना।"

"शाबाश शाबाश" मुस्करा कर जीवन सिंह ने उसकी प्रशंसा की। चाहता तो था पीठ ठोंककर प्रशंसा करना किन्तु अन्य यात्रियों की उपस्थिति के कारण संकोच करके रह गया।

इस संक्षेप से प्रश्नोत्तर ने दोनों के हृदयों को यथेष्ट स्फूर्ति दी। भविष्य की सुनहली चित्रावली ने उनकी आंखों में मद घोल दिया। इसी मद की मस्ती में वे कितनी ही देर तक बातें करते रहे। उनके वार्तालाप का विषय था गुरु बाबा का दरबार, या अमृतसर की सौगातें—पापड़ बड़ियों से लेकर मुरादाबादी बरतनों तक की प्रशंसा, इस बीच में जब पैसों का प्रश्न उठता तो पति की एक ही युक्ति से पत्नी को सन्तोष हो जाता—"मामा जी तो हैं वहां।"

बातें करते-करते जीवन सिंह फिर ऊँघने लगा। वास्तव में वह जन्म-जन्मान्तर से नींद का भूखा था, नींद की तृष्णा किसी समय भी उसका पीछा नहीं छोड़ती थी। सारी रात कोयलों के साथ जूझ-जूझकर जब नींद के अभाव को पूरा करने के लिए अपने क्वार्टर तक पहुँचता, तो घर में प्रविष्ट होते ही गृहस्थी के उत्तरदायित्व उसकी आँखों से नींद को च्युत कर देते। भूले-भटके भी यदि कभी चारपाई का आश्रय ले लेता तो बच्चों के दवा-दारू की चिन्ता, बाज़ार से सौदा आदि लाने की फ़िक्र और अफ़सरों की बेगारों का विचार, यह सब उसे अस्थिर कर देते। कोई ऐसा दिन जब वह जी भर कर सो सकेगा, उसकी एक चिरन्तन साध बनकर रह गया था। अमृतसर जाने के विषय में जब कभी भी उसने सोचा, गुरु बाबा की मनौती के साथ-साथ उसको बरबस यह विचार भी अवश्य आया कि छुट्टियों के उन दिनों में वह लम्बी चादर तानकर सोएगा! और फिर सोएगा भी मामा की राज-महल सी कोठी में खूब— गुदगुदा बिस्तर, गर्म कमरा जहाँ न

किसी अफ़सर की बेगार की चिन्ता होगी, न गृहस्थी के झंझटों से वास्ता।

इस समय गाड़ी में बैठकर भी वह नींद के प्रचण्ड प्रभाव में था—वह ऊँघ रहा था। यह नींद या ऊँघना जो कुछ भी था जीवन सिंह के लिए बहुत मधुर था, क्योंकि गाड़ी के अमृतसर पहुँचने से पहले ही वह कल्पना द्वारा गुरु बाबा के दरबार में उपस्थित था। अपनी पत्नी और बच्चों के साथ वह एक चमकता हुआ पवित्र चँदोवा गुरु बाबा को समर्पित कर रहा था, और गुरु बाबा उसकी श्रद्धा-भक्ति से प्रसन्न हो उसे सात पुत्रों के पिता होने के वरदान से अनुगृहीत कर रहे थे।

अलक्षित संस्कारों का एक जलता हुआ बवण्डर कहीं से आया, जिसने जीवन सिंह को गुरु बाबा के दरबार से उठा कर एक काले कलूटे रेलवे इंजन के बायलर के सामने ला खड़ा किया। उसके एक हाथ में कोयले फैंकने वाला बेलचा और दूसरे हाथ में कोयला समेटने वाली हुक थी। वह सिर से पाँव तक काला भूत बना पूरे वेग के साथ फायर-बक्स में कोयला फैंकता जा रहा था। डयूटी पर होने के समय कोयला फैंकते-फैंकते जब कभी उसकी आँख लग जाती तो शंटर और ड्राइवर की दुःसह गालियां उसके आग से तपे हुए शरीर को और भी तपा देतीं, और निद्रा-स्वाद में विष घुल जाता। गालियां केवल उसके मन और शरीर को ही शोषित नहीं करती थीं, उसके ग्रेड की उन्नति का भी निग्रह करती जाती थीं। आठ वर्षों की लम्बी नौकरी में भी यह दुष्ट 'सी ग्रे ड' जैसे भूत बनकर उससे चिपटा हुआ था। दूसरे फायरमैन, अधिकारियों की सेवा-पूजा करके, जहां उनकी गालियों

को शुभेच्छाओं में परिणत करने में सफल हो सके, वहां उनके ग्रेड भी बढ़ गए। किन्तु जीवन सिंह की चापलूसी के स्थान पर ईमानदारी से चिपटे रहने की धारणा ने न तो उसके ग्रेड में परिवर्तन होने दिया, और न अधिकारियों की गालियों को शुभेच्छाओं में परिणत किया।

नींद के झोंकों में यही दो प्रकार की दुनिया—कभी गुरु बाबा का दरबार, कभी रेलवे इंजन का बॉयलर, बारी-बारी उसके सामने आती रही, और जीवन सिंह की यात्रा समाप्त हुई। जब गाड़ी ने अमृतसर स्टेशन की सीमा में प्रवेश किया, तो उसे अनुभव हुआ कि वही गाड़ी जो निरन्तर आठ वर्ष से दिल्ली और बटिंडे के बीच उसे मृत्यु के से चक्कर देती रही थी, आज चन्द्र-लोक की परी-सी अपने मृदुल पँखों पर उसे महास्वर्ग की ओर लिए जा रही है।

❀ ❀ ❀ ❀

ताँगा सरदार गोपाल सिंह की कोठी के आगे रुका और जीवन सिंह का परिवार उतरकर फाटक में प्रवृष्ट हुआ इन्द्रकौर ने दाईं ओर मुन्ने को उठाया हुआ था और बाएँ हाथ में कपड़ों वाला थैला। बड़ी लड़की ने छोटी को उँगली से लगाया हुआ था और साथ रोटी वाला डिब्बा भी लटकाए चली जा रही थी। जीवन सिंह छोटा-सा सूटकेस पकड़े सबसे आगे था। साथ ही वह कोठी के भव्य-भवन बग़ीचा और इधर-उधर की वस्तुओं को दिखाकर इन्द्रकौर को बड़े गर्व के साथ मामा के ऐश्वर्य का परिचय दे रहा था। इन्द्रकौर जिसने निर्धनता की चक्की चलाते ही आयू बिताई थी, अपने पति के नक्षत्रों

को सराह रही थी, जिसकी इतने बड़े आदमी के साथ नातेदारी थी।

सरदार गोपाल सिंह गोल कमरे में बैठे अपने कुछ मित्रों से वार्त्तालाप कर रहे थे, जब कि उनकी दृष्टि मैले जीवधारियों की एक शृँखला पर जा पड़ी, जो आगे-पीछे बरामदे की तीन सीढ़ियां चढ़ने के पश्चात् धीरे-धीरे ज़नानखाने की ओर सरक रही थी। सरदार साहब के नेत्र इस वीभत्स दृश्य को सहन न कर सके। उनकी क्रुद्ध दृष्टि चिप्स के फ़र्श पर थी, जो मैले कदमों के नीचे गन्दा हो रहा था। राज-भवन में आ धमकी इस काग सेना को धमका देने के लिए किसी नौकर को पुकारने ही वाले थे कि इस कंगाल काफ़िले का प्रतिनिधि उनके सामने उपस्थित हुआ—

"मामा जी साऽसरी अकाल।"

"कौन—ज्यूणा ?" आँखों में कृत्रिम मुस्कान भर कर सरदार साहब ने प्रश्न किया—

"सुनाओ कब आए ?"

"अभी आ रहे हैं मामा जी।"

"अच्छा भीतर चलो" सरदार साहब क्षुब्ध होकर रह गए। काफिला भीतर चला गया।

अपने सम्मानित मित्रों के सामने एक तुच्छ व्यक्ति के मुख से अपने लिए 'मामा' शब्द का सम्बोधन बन्दूक का निशाना बनकर उनकी छाती में जा चुभा। यदि जीवन सिंह 'मामा' शब्द अपनी फूटी जिह्वा से न निकालता तो वह अपने

मित्रों को 'एन ओल्ड सरवेण्ट आफ़ माईन' कहकर तसल्ली करवा देते, किन्तु अब अपनी स्थिति की रक्षा के लिए क्या कहें। आख़िर विषैले घूंट की भांति इस अपमान को पी गए, और अपने मित्रों के साथ ऐसे आकर्षक विषय पर बातचीत आरम्भ कर दी, जिससे इस अवांछित घटना का ध्यान उन लोगों को न रहे। किन्तु दुर्भाग्य ने फिर भी उन्हें न छोड़ा जब वह काफिला मार्च करता हुआ उनके सामने से फिर निकला।

"अच्छा मामा जी पहले सुच्चे मुँह जाकर माथा टेक आएँ, फिर बैठकर बातें करेंगे।"

दोपहरी का गया यह परिवार सायंकाल के समय लौटा। स्नान आदि के पश्चात् प्रसाद ले गुरु बाबा के दरबार में उपस्थित हुए, संकीर्तन सुना—पति पत्नी का रोम-रोम पुलकित हो उठा। रोटी का डिब्बा उनके साथ था। पराठे और आलू की भुरजी वह साथ लेकर चले थे। भोजन करने के पश्चात् बाज़ार का चक्कर लगाया। वस्तुओं के खरीदने के विषय में जीवन सिंह का विचार था कि यह काम वापसी के समय कर लिया जाएगा।

कोठी पहुँचते-पहुँचते काफ़ी अन्धेरा हो गया। तांगे में बैठा-बैठा जीवन सिंह ऊँघ रहा था, और इस ऊँघ में एक बहुत ही सुहावना सुख-स्वप्न था—आज की रात वह खूब जी भर कर सोएगा मामा की कोठी में। और फिर एक चमकता हुआ चँदोवा उसकी आँखों में विस्तृत हो जाता।

जीवन सिंह और इन्द्रकौर के पाँव फ़र्श के साथ सी दिए गए, जब भीतर प्रवेश करने से पहले उनके कानों में कुछ शब्दों की भिनक पड़ी।

"यह चंगड़ों की टोली कहां से आ धमकी?"

"मुझे तो स्वयं चिन्ता लगी है। मनहूस ने फ़र्श को नाश कर दिया—बेचारे खुशिए को दूसरी बार साफ़ करना पड़ा।"

"क्या कहते थे फिर आएँगे।"

"जी हाँ! आएँगे नहीं तो और क्या शमशान-घाट में सोयेंगे।"

"फिर दफ़ा कब होंगे?"

"क्या पता। वह कलमुंही तो कहती थी, कि यहीं रहकर चँदोघा तैयार करवाना है।"

"हिश! मुसाफ़र-खाना समझ छोड़ा है। आते हैं तो दो रोटियां खिलाकर दफ़ा करो। मैं इस अपमान को सहन नहीं कर सकता। मूर्ख ने न आगा देखा न पीछा, शरीफ़ आदमियों के सामने मुझे 'मामा' कह दिया।"

"इसीलिए तो मैंने उनकी बोरी-बिस्तर उठवा कर बाहर रखवा दिया है। किसी तरह भी रात को इन्हों ने पीछा न छोड़ा तो सर्वेण्ट्स क्वार्टर में भिजवादूँगी। दिन होते ही कहदूँगी, अपना सामान लपेटो और चलते बनो।"

इससे आगे क्या बातचीत हुई, ये लोग न सुन सके।

दोनों के कानों में तूफ़ान की सी शाएँ शाएँ होने लगी। इन्दकौर ने गर्दन मोड़कर बरामदे में देखा, किनारे पर उनका वही टूटा-सा सूटकेस पड़ा था, उसके ऊपर वही पुराना कम्बल, और कम्बल के ऊपर कपड़ों वाला थैला।

दोनों ने एक-दूसरे को प्रश्नभरी दृष्टि से ताका, लड़कियों को भी संकेत से पीछे मोड़ लिया, और धीरे से अपना सामान उठा लिया। इन्दकौर का स्वर थिरक कर निकला—

"तो चँदोवे का क्या बनेगा?"

"गुरु बाबा सब लोगों से चँदोवा थोड़े ही मांगता है, जिनको पुत्र देता है।"

"पर...पर मुन्ना बीमार जो हुआ था।"

"गुरु रक्षक है मुन्ने का।"

"और फिर ये सब अन्धकार को चीरते हुए कोठी से बाहर हो गए।